सुहपयडीण विसोही, तिव्वो असुहाण संकिलेसेण ।
विवरीदेण जहण्णो, अणुभागो सव्वपयडीणं ॥ 163 ॥

≈अर्थ— साता वेदनीय आदि शुभ प्रकृतियों का अनुभाग-बंध विशुद्ध परिणामों से उत्कृष्ट होता है ।

≈असाता वेदनीय आदि अशुभ प्रकृतियों का अनुभाग-बंध संक्लेश परिणामों से उत्कृष्ट होता है ।

≈विपरीत परिणामों से जघन्य अनुभाग-बंध होता है । अर्थात् शुभ प्रकृतियों का संक्लेश परिणामों से और अशुभ प्रकृतियों का विशुद्ध परिणामों से जघन्य अनुभाग-बंध होता है ।

≈इस प्रकार सब प्रकृतियों का अनुभाग-बंध जानना ॥ 163 ॥

अनुभाग-बंध

कर्मों के फलदान शक्ति को अनुभाग कहते हैं ।

नियम

	उत्कृष्ट अनुभाग-बंध	जघन्य अनुभाग-बंध
शुभ प्रकृतियाँ	विशुद्ध परिणाम द्वारा	संक्लेश परिणाम द्वारा
अशुभ प्रकृतियाँ	संक्लेश परिणाम द्वारा	विशुद्ध परिणाम द्वारा

मंद कषायरूप परिणाम	• विशुद्ध परिणाम
तीव्र कषायरूप परिणाम	• संक्लेश परिणाम

बादालं तु पसत्था, विसोहिगुणमुक्कडस्स तिव्वाओ ।
बासीदि अप्पसत्था, मिच्छुक्कडसंकिलिट्ठस्स ॥ 164 ॥

≈ अर्थ— पहले कही गई जो 42 पुण्य प्रकृतियाँ हैं उनका उत्कृष्ट अनुभाग-बंध विशुद्धतारूप गुण की उत्कृष्टता वाले जीव के होता है ।

≈असातादिक 82 अशुभ प्रकृतियाँ उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम वाले मिथ्यादृष्टि जीव के उत्कृष्ट अनुभाग सहित बंधती हैं ॥ 164 ॥

बंध-योग्य प्रकृतियाँ

(120 + 4 = 124)

वर्णादि-4 प्रकृतियाँ प्रशस्त और अप्रशस्त दो बार गिनी हैं

42 प्रशस्त प्रकृतियाँ

विशुद्धता की उत्कृष्टता से उत्कृष्ट अनुभाग-बंध

82 अप्रशस्त प्रकृतियाँ

उत्कृष्ट संक्लेश से मिथ्यादृष्टि जीव को उत्कृष्ट अनुभाग-बंध

आदाओ उज्जोओ, मणुवतिरिक्खाउगं पसत्थासु ।
मिच्छस्स होंति तिव्वा, सम्माइट्ठिस्स सेसाओ ॥ 165 ॥

≈अर्थ— उन 42 प्रशस्त प्रकृतियों में से आतप, उद्योत, मनुष्यायु और तिर्यंचायु – इन चार का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध विशुद्ध मिथ्यादृष्टि के होता है ।

≈शेष 38 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध विशुद्ध सम्यग्दृष्टि के होता है ॥ 165 ॥

प्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी	कारण
आतप, उद्योत	मिथ्यादृष्टि जीव	क्योंकि आतप का बंध प्रथम गुणस्थान में ही होता है, तथा उद्योत का बंध सासादन तक ही होता है । अत: इनका उत्कृष्ट बंध इन्हीं दो में पाया जायेगा ।
मनुष्यायु, तिर्यंचायु	मिथ्यादृष्टि जीव	क्योंकि उत्कृष्ट अनुभाग वाली मनुष्य, तिर्यंच आयु भोगभूमि संबंधी है तथा भोगभूमि संबंधी मनुष्य, तिर्यंच आयु का बंध मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच ही करते हैं, सम्यग्दृष्टि नहीं ।
शेष 38	विशुद्ध सम्यग्दृष्टि	क्योंकि सम्यग्दृष्टि के विशुद्धि अधिक होने से इनका उत्कृष्ट अनुभाग-बंध पाया जा सकेगा ।

मणुओरालदुवज्जं, विसुद्धसुरणिरयअविरदे तिव्वा ।
देवाउ अप्पमत्ते, खवगे अवसेसबत्तीसा ॥ 166 ॥

≈अर्थ—सम्यग्दृष्टि की 38 प्रकृतियों में से मनुष्य-2, औदारिक-2 और वज्रऋषभनाराचसंहनन – इन पाँचों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध विशुद्ध देव और नारकी असंयत सम्यग्दृष्टि करता है ।

≈देवायु को अप्रमत्तसंयत गुणस्थान वाला उत्कृष्ट अनुभागसहित बांधता है ।

≈बाकी 32 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध क्षपकश्रेणी वाले जीव के होता है ॥ 166 ॥

शेष 38 प्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
मनुष्य-2 औदारिक-2 वज्रऋषभनाराच	विशुद्ध देव-नारकी सम्यग्दृष्टि जो अनंतानुबंधी की विसंयोजना के अंतिम समयवर्ती हैं क्योंकि वहीं पर देव-नारकी को सर्वाधिक विशुद्धि पायी जाती है ।
देवायु	अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती
शेष 32	क्षपक श्रेणी वाला जीव । 6 प्रकृतियों का उत्कृष्ट बंध पूर्व के गुणस्थानों में कहा क्योंकि क्षपक जीव के इन 6 प्रकृतियों का बंध पाया नहीं जाता ।

उवघादहीणतीसे, अपुव्वकरणस्स उच्चजससादे ।
सम्मेलिदे हवंति हु, खवगस्सऽवसेसबत्तीसा ॥ 167 ॥

≈अर्थ— अपूर्वकरण के छट्ठे भाग की 30 व्युच्छित्ति प्रकृतियों में एक उपघात प्रकृति को छोड़ बाकी 29 प्रकृतियाँ और

≈उच्च गोत्र, यशस्कीर्ति, सातावेदनीय ये 3

≈इस प्रकार सब 29 + 3 = 32 प्रकृतियाँ क्षपकश्रेणी वाले के पूर्व गाथा में कही थीं सो जानना ।। 167 ।।

शेष 32 प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
नामकर्म की 29 प्रकृतियाँ जो अपूर्वकरण में व्युच्छिन्न होती हैं (30 – उपघात)	अपूर्वकरण के छठे भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक
साता वेदनीय उच्च गोत्र यश:कीर्ति	अंतिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपराय क्षपक

मिच्छस्संतिमणवयं, णरतिरियाऊणि वामणरतिरिये ।
एइंदिय आदावं, थावरणामं च सुरमिच्छे ॥ 168 ॥

≈अर्थ— मिथ्यात्व गुणस्थान की व्युच्छित्ति प्रकृतियों में से अंत की सूक्ष्मादि 9 प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध संक्लेश परिणाम वाले मिथ्यादृष्टि मनुष्य वा तिर्यंच करते हैं ।

≈विशुद्ध परिणाम वाले मिथ्यादृष्टि मनुष्य वा तिर्यंच मनुष्यायु, तिर्यंचायु के उत्कृष्ट अनुभाग को बाँधते हैं ।

≈अपनी आयु के छह महीने बाकी रहने पर मिथ्यादृष्टि देव संक्लेश परिणामों से एकेन्द्री और स्थावर प्रकृति का और विशुद्ध परिणामों से आतप प्रकृति का उत्कृष्ट अनुभाग बाँधते हैं ॥ 168 ॥

अप्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण विकलत्रय नरक-2, नरकायु	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच क्योंकि पाप प्रकृतियाँ संक्लेश परिणामों से उत्कृष्ट अनुभाग वाली बंधती हैं ।
एकेन्द्रिय जाति, स्थावर	अपनी आयु के 6 माह शेष रहने पर संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव
मनुष्यायु, तिर्यंचायु	विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच
आतप	अपनी आयु के 6 माह शेष रहने पर विशुद्ध मिथ्यादृष्टि देव

* मनुष्यायु, तिर्यंचायु, आतप — ये प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं ।

उज्जोवो तमतमगे, सुरणारयमिच्छगे असंपत्तं ।
तिरियदुगं सेसा पुण, चउगादिमिच्छे किलिट्ठे य ॥ 169 ॥

≈ अर्थ— सातवें तमस्तमक नामा नरक में उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख हुआ विशुद्ध मिथ्यादृष्टि नारकी जीव उद्योत प्रकृति का, और

≈मिथ्यादृष्टि देव व नारकी असंप्राप्तसृपाटिका संहनन, तिर्यंच गति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी – इन तीनों का उत्कृष्ट अनुभाग बाँधते हैं ।

≈बाकी रही 68 प्रकृतियों को चारों गति के संक्लेश परिणाम वाले मिथ्यादृष्टि जीव उत्कृष्ट अनुभागसहित बांधते हैं ॥ 169 ॥

अप्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
उद्योत	उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख सप्तम पृथ्वी का विशुद्ध नारकी क्योंकि सम्यग्दृष्टि के उद्योत का बंध नहीं होता ।
असंप्राप्तासृपाटिका, तिर्यंच-2	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव, नारकी
शेष 68 प्रकृतियाँ	चारों गति के संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव

* उद्योत प्रशस्त प्रकृति है ।

वण्णचउक्कमसत्थं, उवघादो खवगघादि पणवीसं ।
तीसाणमवरबंधो, सगसगवोच्छेदठाणम्हि ॥ 170 ॥

≈अर्थ— अशुभ वर्णादि चार तथा उपघात और क्षय होने वाली घातिया कर्मों की पच्चीस अर्थात् ज्ञानावरण 5, अंतराय 5, दर्शनावरण 4, निद्रा, प्रचला, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, संज्वलन 4 – इन सब 30 प्रकृतियों का अपनी-अपनी बंध-व्युच्छित्ति के स्थान पर जघन्य अनुभाग-बंध होता है ॥ 170 ॥

30 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
निद्रा-प्रचला	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
अप्रशस्त वर्णादि - 4, उपघात	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
हास्यादि - 4	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
पुरुषवेद	अनिवृत्तिकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
संज्वलन - 4	अनिवृत्तिकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
ज्ञानावरण - 5 दर्शनावरण - 4 अंतराय – 5	सूक्ष्मसांपराय क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय

अणथीणतियं मिच्छं, मिच्छे अयदे हु बिदियकोधादी ।
देसे तदियकसाया, संजमगुणपच्छिदे सोलं ॥ 171 ॥

≈अर्थ— अनंतानुबंधी कषाय-4, स्त्यानगृद्धादिक-3 और मिथ्यात्व – ये आठ मिथ्यादृष्टि गुणस्थान में,

≈दूसरी अप्रत्याख्यान कषाय-4 असंयत गुणस्थान में,

≈तीसरी प्रत्याख्यान कषाय-4 देशसंयत गुणस्थान में,

≈इन 16 प्रकृतियों को इन गुणस्थानों में जो संयमगुण के धारने को सम्मुख हुआ है ऐसा विशुद्ध परिणाम वाला जीव जघन्य अनुभागसहित बाँधता है ॥ 171 ॥

16 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी	विशेष
अनंतानुबंधी-4, स्त्यानगृद्धि-3, मिथ्यात्व	मिथ्यादृष्टि	जो संयम प्राप्त करने के सम्मुख है अर्थात् सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करने वाला है ऐसा मनुष्य
अप्रत्याख्यान-4	अविरत सम्यग्दृष्टि	
प्रत्याख्यान-4	देशसंयत	

अनंतानुबंधी-4 और स्त्यानगृद्धि-3 यद्यपि सासादन में भी बंधती है, तथापि वहाँ संक्लेश परिणाम होने के कारण उनका जघन्य बंध नहीं होता ।

मिथ्यात्व से सप्तम गुणस्थान प्राप्त करने की विशुद्धि से अविरत सम्यक्त्व से सप्तम गुणस्थान प्राप्त करने की विशुद्धि अधिक है ।

आहारमप्पमत्ते, पमत्तसुद्धे य अरदिसोगाणं ।
णरतिरिये सुहुमतियं, वियलं वेगुव्वछक्काओ ॥ 172 ॥

≈अर्थ— आहारक-2 प्रमत्त गुणस्थान के सम्मुख हुए संक्लेशपरिणाम वाले अप्रमत्त गुणस्थानवाले के तथा

≈अरति, शोक अप्रमत्त गुणस्थान के सम्मुख हुए विशुद्ध प्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव के जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ।

≈सूक्ष्मादि तीन, विकलेन्द्रिय तीन, वैक्रियिक-षट्क और 4 आयु – ये सोलह प्रकृतियाँ मनुष्य अथवा तिर्यंच के जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥ 172 ॥

20 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
आहारक-2	प्रमत्तसंयत गुणस्थान के सम्मुख हुआ संक्लेशी अप्रमत्तसंयत
अरति, शोक	अप्रमत्तसंयत गुणस्थान के सम्मुख हुआ विशुद्ध प्रमत्तसंयत
सूक्ष्म-3, विकलत्रय वैक्रियिक-6 आयु-4	मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच

सुरणिरये उज्जोवोरालदुगं तमतमम्हि तिरियदुगं ।
णीचं च तिगदिमज्झिम-परिणामे थावरेयक्खं ॥ 173 ॥

≈अर्थ— उद्योत, औदारिक-द्विक – ये तीन देव और नारकी के,

≈सातवें तमस्तमक नरक में विशुद्ध नारकी के तिर्यग्गति-द्विक तथा नीचगोत्र ये तीन और

≈स्थावर, एकेन्द्री ये दो प्रकृतियाँ नारकी के बिना तीन गति वाले तीव्र विशुद्धि और संक्लेश से रहित मध्यमपरिणामी जीवों के जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥ 173 ॥

8 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
उद्योत, औदारिक-2	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव, नारकी
तिर्यंच-2, नीचगोत्र	उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख सप्तम पृथ्वी का विशुद्ध नारकी
स्थावर, एकेन्द्रिय	मध्यम परिणामी तिर्यंच, मनुष्य, देव

सोहम्मोत्ति य तावं, तित्थयरं अविरदे मणुस्सम्हि ।
चदुगदिवामकिलिट्ठे, पण्णरस दुवे विसोहीये ॥ 174 ॥

≈अर्थ— भवनत्रिक से लेकर सौधर्मद्विक तक के संक्लेश परिणामी देवों के आतप प्रकृति,

≈नरक जाने को सम्मुख हुए अविरत गुणस्थानवर्ती मनुष्य के तीर्थंकर प्रकृति,

≈चारों गति के संक्लेश परिणामी मिथ्यादृष्टि जीवों के 15 प्रकृतियाँ और

≈चारों गति के विशुद्ध परिणामी जीवों के दो प्रकृतियाँ, जघन्य अनुभाग सहित बंधती हैं ॥ 174 ॥

19 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
आतप	संक्लिष्ट भवनत्रिक, सौधर्म-2 देव
तीर्थंकर	नरक जाने को सम्मुख असंयत सम्यग्दृष्टि मनुष्य
15 प्रशस्त प्रकृतियाँ	चारों गति के संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि
2 अप्रशस्त प्रकृतियाँ	चारों गति के विशुद्ध मिथ्यादृष्टि

परघाददुगं तेजदु, तसवण्णचउक्क णिमिणपंचिंदी ।
अगुरुलहुं च किलिट्ठे, इत्थिणउंसं विसोहीये ॥ 175 ॥

≈अर्थ— परघात, उच्छ्वास, तैजसद्विक, त्रसादि चार, शुभ वर्णादि चार, निर्माण, पंचेन्द्री और अगुरुलघु – ये 15 संक्लेशपरिणामी जीव की तथा

≈स्त्रीवेद, नपुंसकवेद – ये दो विशुद्धपरिणामी जीव की प्रकृतियाँ जानना ॥ 175 ॥

17 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
परघात-उच्छ्वास, तैजस-2 त्रस-4, प्रशस्त वर्ण-4 निर्माण, पंचेन्द्रिय जाति, अगुरुलघु	संक्लिष्ट चतुर्गति के जीव
नपुंसक वेद, स्त्री वेद	चतुर्गति के विशुद्ध जीव

सम्मो वा मिच्छो वा, अट्ठ अपरियट्टमज्झिमो य जदि ।
परिवट्टमाणमज्झिम-मिच्छाइट्ठि दु तेवीसं ॥ 176 ॥

≈अर्थ— आगे की गाथा में जो 31 प्रकृति कहेंगे, उनमें से पहली आठ प्रकृतियों को अपरिवर्तमान मध्यमपरिणाम वाला सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि जीव जघन्य अनुभाग सहित बाँधता है ।

≈शेष 23 प्रकृतियों को परिवर्तमान मध्यमपरिणामी मिथ्यादृष्टि जीव ही जघन्य अनुभागसहित बाँधता है ॥ 176 ॥

अपरिवर्तमान परिणाम

प्रत्येक समय में जो विशुद्ध या संक्लेश
परिणाम बढ़ते या घटते ही जायें
उन्हें अपरिवर्तमान परिणाम कहते हैं ।

विशुद्ध परिणाम (बढ़ते ही जाएँ) ⟶

विशुद्ध परिणाम घटते ही जाएँ ⟵

ऐसे ही संक्लेश परिणाम पर भी लगाना ।

परिवर्तमान परिणाम

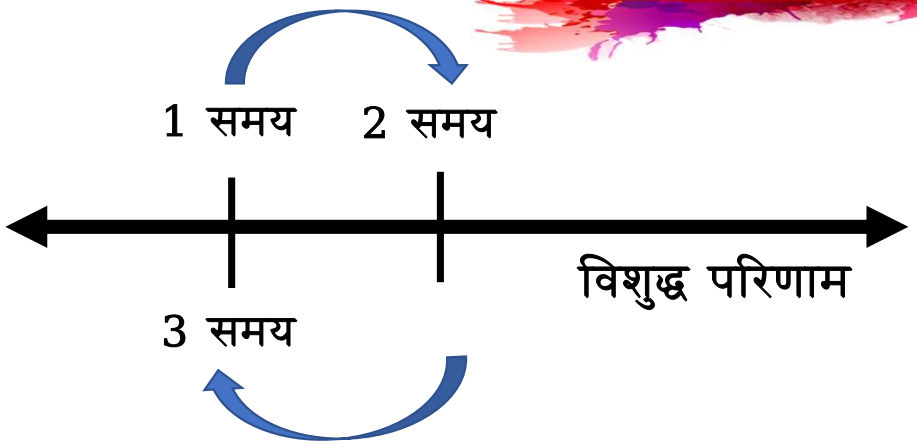

जिस परिणाम को प्राप्त होकर अन्य परिणाम प्राप्त किया,

पुनः अगले समय में प्रथम समय वाला ही परिणाम प्राप्त करना संभव हो,

ऐसे परिणामों को परिवर्तमान परिणाम कहते हैं ।

ऐसे ही संक्लेश भावों पर भी लगाना ।

- ये परिणाम भी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट; ऐसे 3 प्रकार के हैं ।
- उनमें मध्यम परिणामों के द्वारा जघन्य बंध होता है, जघन्य या उत्कृष्ट के द्वारा नहीं ।

31 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
8 प्रकृतियाँ	अपरिवर्तमान मध्यम परिणामी सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि
शेष 23 प्रकृतियाँ	परिवर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि

थिरसुहजससाददुगं उभये मिच्छेव उच्चसंठाणं ।
संहदिगमणं णरसुरसुभगादेज्जाण जुम्मं च ॥ 177 ॥

≈अर्थ— स्थिर, शुभ, यशस्कीर्ति, सातावेदनीय – इन चारों का जोड़ा अर्थात् स्थिर-अस्थिरादि आठ प्रकृतियाँ सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टि इन दोनों के जघन्य अनुभाग सहित बंधती है और

≈उच्च गोत्र, 6 संस्थान, 6 संहनन, विहायोगति का जोड़ा, तथा मनुष्यगति-स्वर-सुभग-आदेय इन चारों का जोड़ा, सब मिलकर 23 प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग-बंध मिथ्यादृष्टि के ही होता है ॥ 177 ॥

जघन्य अनुभाग-बंध — 31 प्रकृतियाँ

8 प्रकृतियाँ
(सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि)

- स्थिर-अस्थिर
- शुभ-अशुभ
- यश-अयश
- साता-असाता

23 प्रकृतियाँ
(मिथ्यादृष्टि)

- उच्च गोत्र
- संस्थान-6
- संहनन-6
- विहायोगति-2
- मनुष्य-2
- सुस्वर-दुस्वर
- सुभग-दुर्भग
- आदेय-अनादेय

घादीणं अजहण्णो-णुक्कस्सो वेयणीयणामाणं ।
अजहण्णमणुक्कस्सो, गोदे चदुधा दुधा सेसा ॥ 178 ॥

≈अर्थ— चारों घातिया कर्मों का अजघन्य अनुभाग-बंध, वेदनीय और नामकर्म का अनुत्कृष्ट अनुभाग-बंध, और गोत्रकर्म का अजघन्य तथा अनुकृष्ट अनुभाग-बंध – इन सबके सादि आदिक चार-चार भेद हैं और

≈बाकी के चारों घातिया कर्मों के अजघन्य के बिना तीन भेद, वेदनीय तथा नाम के अनुकृष्ट के सिवाय तीन भेद, गोत्रकर्म के अजघन्य तथा अनुकृष्ट के बिना दो भेद – इन सबके सादि और अध्रुव दो ही भेद हैं ॥ 178 ॥

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
4 घातिया कर्म	सादि, अध्रुव	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
वेदनीय, नाम	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	चारों
गोत्र	सादि, अध्रुव	चारों	सादि, अध्रुव	चारों
आयु	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव

3 घातिया कर्म

इनका जघन्य अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अत: इनका अजघन्य बंध चार प्रकार का होता है

अनादि	• जब तक 10वाँ गुणस्थान प्राप्त नहीं होता, तब तक इनका अजघन्य अनुभाग-बंध अनादि रहता है ।
सादि	• 11वें गुणस्थान से उतरकर 10वें अथवा चतुर्थ गुणस्थान में जब घातिया का बंध प्रारंभ होता है, तब अजघन्य का सादि बंध होता है ।
ध्रुव	• अभव्य जीव की अपेक्षा कभी अजघन्य बंध का अंत नहीं आता, अत: ध्रुव बंध है ।
अध्रुव	• 10वें गुणस्थान में जब अजघन्य बंध समाप्त होकर जघन्य बंध होता है, तब अजघन्य का अध्रुव बंध कहलाता है ।

इसी प्रकार मोहनीय कर्म का भी जानना चाहिए । पर उसका जघन्य अनुभाग-बंध 9वें गुणस्थान में होता है, इतना विशेष है ।

इसी प्रकार चूंकि वेदनीय, नाम का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अतः अनुत्कृष्ट बंध चार प्रकार का होता है ।

गोत्र कर्म के अजघन्य, अनुत्कृष्ट के 4-4 प्रकार

गोत्र कर्म का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अतः अनुत्कृष्ट बंध चार प्रकार का होता है ।

गोत्र कर्म का जघन्य बंध विशिष्ट अवस्था में ही होता है । 7वीं पृथ्वी का नारकी जो उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख है, वही गोत्र कर्म का जघन्य बंध करता है । इस अवस्था के पूर्व गोत्र कर्म का अजघन्य बंध अनादि है ।

जघन्य बंध होने पर अजघन्य बंध अध्रुव है ।

जघन्य बंध करके सम्यक्त्व होने पर उच्च गोत्र का अजघन्य बंध होने पर अजघन्य बंध सादि है ।

अभव्य की अपेक्षा कभी नष्ट नहीं होता, अतः अजघन्य बंध ध्रुव है ।

सत्थाणं धुवियाणम-णुक्कस्समसत्थगाण धुवियाणं ।
अजहण्णं च य चदुधा, सेसा सेसाणयं च दुधा ॥ 179 ॥

≈अर्थ— ध्रुव प्रकृतियों में तैजस आदि आठ शुभ प्रकृतियों के अनुकृष्ट अनुभाग-बंध के, मतिज्ञानावरणादि अशुभ ध्रुव प्रकृतियों के अजघन्य अनुभाग-बंध के सादि आदिक चारों भेद हैं ।

≈ध्रुव प्रकृतियों के जघन्यादि तीन भेद तथा 73 अध्रुव प्रकृतियों के जघन्यादि चारों भेद – इन सबके सादि और अध्रुव ये दो ही भेद हैं ॥ 179 ॥

नियम

जिन प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग-बंध विशिष्ट गुणस्थान में होता है और

जो ध्रुव-बंधी प्रकृति है,

उनका अजघन्य बंध चार प्रकार का होता है ।

जिन प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध गुणस्थान विशेष में होता है और

जो ध्रुव-बंधी प्रकृति है,

उनका अनुत्कृष्ट अनुभाग-बंध चार प्रकार का होता है ।

उत्तर प्रकृतियों में जघन्य-अजघन्य आदि भेद

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
ध्रुव-बंधी प्रकृतियों में				
तैजस-2 अगुरुलघु, निर्माण प्रशस्त वर्णादि-4	2	2	2	4
ज्ञानावरण - 5 दर्शनावरण - 9 अन्तराय - 5 मिथ्यात्व - 1 कषाय - 16 भय-जुगुप्सा - 2 उपघात अप्रशस्त वर्णादि - 4	2	4	2	2
73 अध्रुव-बंधी प्रकृतियाँ	2	2	2	2

सत्ती य लदादारू, अट्ठीसेलोवमाहु घादीणं ।
दारुअणंतिमभागोत्ति देसघादी तदो सव्वं ॥ 180 ॥

≈अर्थ— घातिया कर्मों की फल देने की शक्ति लता, दारु, अस्थि और शैल के समान समझना । अर्थात् इनमें जैसा क्रम से अधिक-अधिक कठोरपना है वैसा ही अनुभाग में भी समझना ।

≈लता से दारु भाग के अनंतवें भाग तक शक्तिरूप स्पर्द्धक देशघाती हैं और

≈शेष बहुभाग से लेकर शैलभाग तक के स्पर्द्धक सर्वघाती हैं ॥ 180 ॥

स्पर्धक

वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं ।

स्थिति की अपेक्षा निषेक संज्ञा होती है और अनुभाग को बताने के लिए स्पर्धक संज्ञा है ।

घातिया कर्मों का अनुभाग

जघन्य

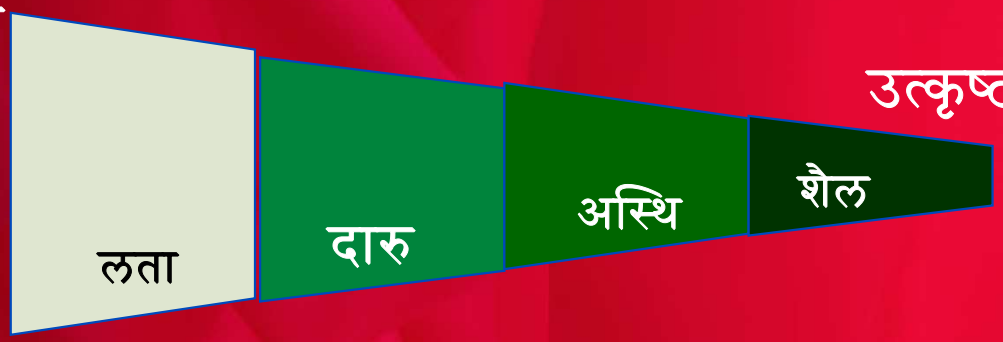

उत्कृष्ट

लता	दारु	अस्थि	शैल
• बेल	• काष्ठ, लकड़ी	• हड्डी	• पाषाण, पर्वत

जैसे इनमें उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कठोरता पायी जाती है, उसी प्रकार घातिया कर्मों के अनुभाग अर्थात् फल देने की शक्ति इन-इन स्पर्धकों में अधिक-अधिक पायी जाती है।

घातिया कर्मों की अनुभाग-शक्ति दो प्रकार की है-

सर्वघाती

- आत्मा के गुण का पूर्णरूप से घात करने वाला ।

सारे लतारूप स्पर्धक देशघाती होते हैं ।

देशघाती

- आत्मा के गुण का एकदेशरूप से घात करने वाला ।

दारु के अनंतवे भाग स्पर्धक देशघाती होते हैं ।

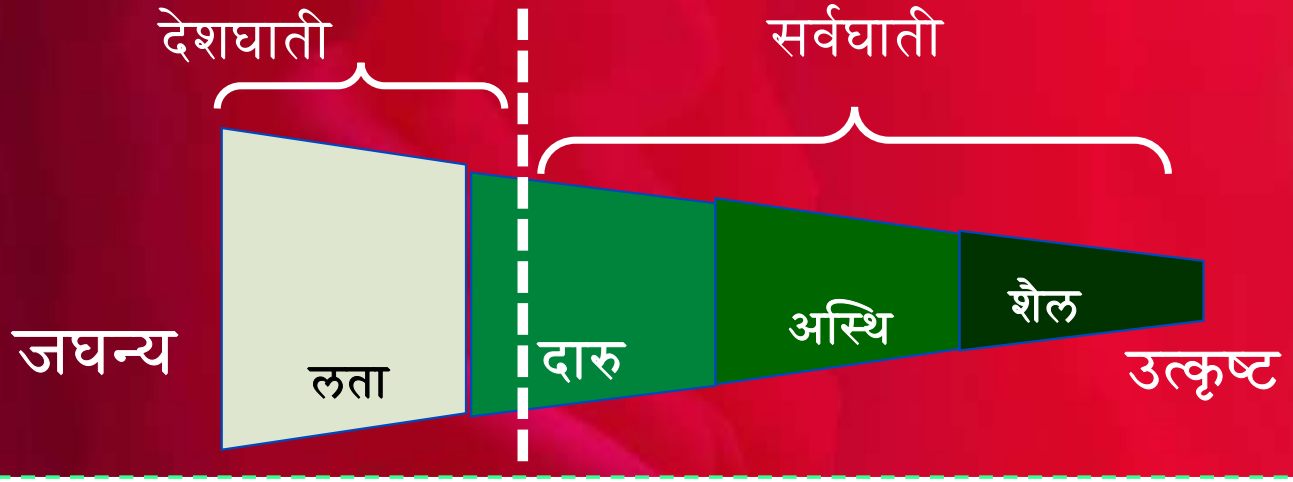

दारु के अनंत बहुभाग स्पर्धक सर्वघाती होते हैं ।

अस्थि और शैल स्पर्धक सर्वघाती होते हैं ।

देसोत्ति हवे सम्मं, तत्तो दारूअणंतिमे मिस्सं ।
सेसा अणंतभागा, अट्ठिसिलाफड्ढया मिच्छे ॥ 181 ॥

≈अर्थ— मिथ्यात्व प्रकृति के लता भाग से दारु भाग के अनंतवें भाग तक देशघाती स्पर्द्धक सम्यक्त्व प्रकृति के हैं ।

≈दारुभाग के अनंत बहुभाग के अनंतवे भागप्रमाण जुदी जाति के ही सर्वघातिया स्पर्द्धक मिश्र प्रकृति के जानना ।

≈शेष अनंत बहुभाग तथा अस्थिभाग, शैलभागरूप स्पर्द्धक मिथ्यात्व प्रकृति के होते हैं ॥ 181 ॥

दर्शन मोहनीय का अनुभाग

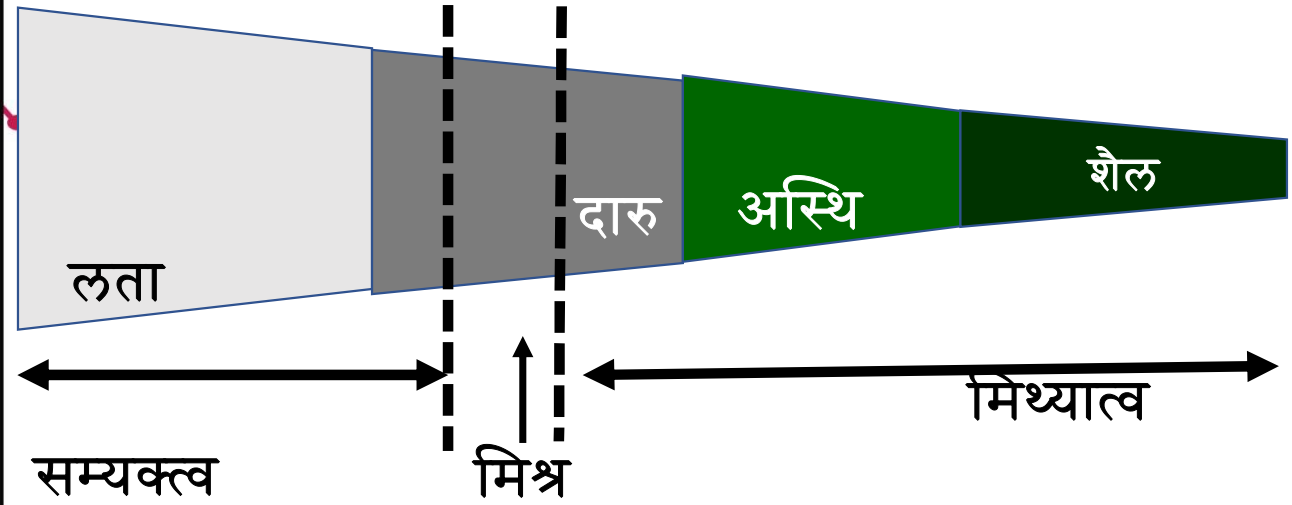

लता भाग दारु का अनंतवाँ भाग	सम्यक्त्व प्रकृति
दारु का अगला अनंतवाँ भाग	मिश्र प्रकृति
दारु का शेष अनंत अनुभाग तथा अस्थि, शैल	मिथ्यात्व प्रकृति

यह ही एक प्रकृति है, जिसमें भिन्न-भिन्न अनुभाग के कारण प्रकृतियों के नाम बदल जाते हैं ।

अन्य किसी प्रकृति में अनुभाग बदलने से प्रकृति का नाम नहीं बदला है ।

आवरणदेसघादं-तरायसंजलणपुरिससत्तरसं ।
चदुविधभावपरिणदा, तिविधा भावा हु सेसाणं ॥ 182 ॥

≈अर्थ— आवरणों में देशघाती की 7 प्रकृतियाँ (4 ज्ञानावरण, 3 दर्शनावरण), अंतराय 5, संज्वलन 4 और पुरुषवेद – ये 17 प्रकृतियाँ शैल आदिक चारों तरह के भावरूप परिणमन करती हैं और

≈बाकी सब प्रकृतियों के शैल आदि तीन तरह के परिणमन होते हैं, केवल लतारूप परिणमन नहीं होता ॥ 182 ॥

अनुभाग के प्रकार

प्रकृतियाँ	लता, दारु, अस्थि, शैल	लता, दारु, अस्थि	लता, दारु	लता
देशघाती ज्ञानावरण-4, देशघाती दर्शनावरण-3, संज्वलन-4, पुरुषवेद, अंतराय-5	✓	✓	✓	✓
सर्वघाती केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण 5 निद्राएँ 12 कषाय	दारु, अस्थि, शैल	दारु, अस्थि	दारु	✗
8 नोकषाय	✓	✓	✓	✗

क्या मिथ्यात्व अन्य सर्वघाती के साथ ले सकते हैं ? हाँ, उसके जैसा ही है ।

अवसेसा पयडिओ, अघादिया घादियाण पडिभागा ।
ता एव पुण्णपावा, सेसा पावा मुणेयव्वा ॥ 183 ॥

≈अर्थ— शेष अघातिया कर्मों की प्रकृतियाँ घातिया कर्मों की तरह प्रतिभागसहित जाननी अर्थात् तीन भावरूप परिणमती हैं और

≈वे ही पुण्यरूप तथा पापरूप होती हैं । तथा

≈बाकी बची घातिया कर्मों की सब प्रकृतियाँ पापरूप ही हैं ॥ 183 ॥

अघातिया कर्म की प्रकृतियाँ घातिया कर्म की तरह प्रतिभाग युक्त जानना ।

अघातिया कर्म की प्रकृति पुण्य और पापरूप है ।

घातिया कर्म की सारी प्रकृतियाँ पापरूप ही हैं ।

गुडखंडसक्करामिय-सरिसा सत्था हु णिंबकंजीरा ।
विसहालाहलसरिसाऽसत्था हु अघादिपडिभागा ॥ 184 ॥

≈अर्थ— अघातिया कर्मों में प्रशस्त प्रकृतियों के शक्तिभेद गुड़, खांड, शर्करा और अमृत के समान जानने ।

≈अप्रशस्त प्रकृतियों के नींब, कांजीर, विष, हलाहल के समान शक्तिभेद (स्पर्द्धक) जानना । ॥ 184 ॥

≈इस प्रकार अनुभाग-बंध का स्वरूप कहा ॥

अघातिया कर्मों का अनुभाग

प्रशस्त प्रकृतियाँ (42)

जैसे गुड़, खाण्ड आदि अधिक-अधिक मिष्ट हैं, वैसे इन प्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर मिष्टरूप हैं । अर्थात् अधिक-अधिक सांसारिक सुख के कारण हैं ।

अप्रशस्त प्रकृतियाँ (37)

जैसे निंब, कांजीर आदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दुःखद हैं, वैसे इन अप्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दुःख के कारण हैं ।

प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग प्रकार	अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग प्रकार
गुड़, खांड, शर्करा, अमृत	निंब, कांजीर, विष, हलाहल
गुड़, खांड, शर्करा	निंब, कांजीर, विष
गुड़, खांड	निंब, कांजीर

मात्र गुड़रूप अथवा निंबरूप अनुभाग वाले स्पर्धक नहीं पाए जाते हैं ।